मजदूरों का अपना कोई देश नहीं होता ।

दुनियां के मजदूरो, एक हो !

फरीदाबाद मजदूर समाचार

मजदूरों की मुक्ति खुद मजदूरों का काम है ।

दुनियां को बदलने के लिए मजदूरों को खुद को बदलना होगा ।

RN 42233 पोस्टल रजिस्ट्रेशन L/HR/FBD/73

नई सीरीज नम्बर 29 | नवम्बर 1990 | 50 पैसे

मन्दिर मस्जिद और मजदूर

आज से पांच सात हजार साल पहले दासों की मेहनत पर स्वामी पलते थे। दासों को माथे पर दाग कर रखा जाता था ताकि पहचानने में दिक्कत न हो। स्वामियों की ब्याह—शादियों में गायों के साथ दास-दासियां भी दहेज में दी जाती थीं। और मृत स्वामी के साथ जिन्दा दास-दासियों को दफनाने तक का रिवाज था। भारतीय उपमहाद्वीप में ऐसे स्वामियों में एक प्रमुख व्यक्ति स्वामी राम माने जाते हैं।

स्वामी व्यवस्था का स्थान लेने वाली सामन्ती व्यवस्था की पहचान बेगार प्रथा थी। चन्द्रगुप्त मौर्य हो चाहे चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, इब्राहिम लोधी हो चाहे अकबर, सब सम्राटों-बादशाहों की शानो-शौकत भूदासों के खून-पसीने का निचोड़ थी।

लुटेरे वर्ग विगत के प्रमुख लुटेरों व उनके सहायकों को अपने पूज्य बना कर उनकी पूजा-अर्चना करते हैं तथा शोषितों में उन्हें प्रतिष्ठित करने के लिये काफी खर्च-वर्च करते हैं। ऐसी पूज्य प्रतिमायें दबे-कुचलों को भ्रमित तो करती ही हैं, उन्हें लुटेरों के लिये मरने-मारने को तैयार भी करती हैं। यही कुछ आज मन्दिर और मस्जिद के नाम पर यहां हो रहा है।

लुटेरे वर्गों के लिये दमन-शोषण पर परदा डालना जरूरी है जबकि मजदूरों को तो दमन-शोषण से मुक्ति चाहिये। इसके लिये मजदूरों को पूंजीवादी समाज के स्थान पर नये समाज का निर्माण करना होगा। मन्दिर-मस्जिद और पूजा—नमाज इस काम में रुकावट हैं। और फिर, दहेज में सैंकड़ों दास-दासियां लेने वाले स्वामी राम तथा लाखों लोगों की बेगार पर मौज—मस्ती करने वाले बादशाह बाबर से मजदूरों का कोई लेना-देना नहीं है।

असल में, मजदूरों के दुख-दर्द की जनना इस पूंजीवादी व्यवस्था की हकीकत पर परदा डालने के लिये धर्म की अलौकिक शक्तियों तथा किस्मत-विस्मत की बातें बड़े काम की हैं। और मजदूरों द्वारा ईश्वर-अल्लाह की पूजा, पूंजी के नुमाइन्दों के फायदे में जाती है। इसीलिये मजदूर वर्ग का क्रान्तिकारी सिद्धान्त धर्म को अफीम कहता है—धर्म के नशे से दुख-दर्द दूर नहीं होते पर कम अवश्य महसूस होने लगते हैं।

जाहिर है, मुक्ति की राह पर बढ़ने के लिये **मजदूरों का काम धर्मों में एकता लाना नहीं है बल्कि मजदूरों का काम सब धर्मों का नाश करना है।**

1935-37 में स्पेन में क्रान्तिकारी मजदूर लहर के समय मजदूर वहां गिरजे चर्च तोड़ रहे थे·········

मौत और जिन्दगी

18 अक्टूबर के इकोनौमिक टाइम्स के अनुसार महाराष्ट्र सरकार के पर्यावरण बोर्ड के चेयरमैन ने औद्योगिक सुरक्षा के सम्बन्ध में एक अखिल भारतीय सम्मेलन में जानकारी दी कि **भारत में फैक्ट्रियों में हर साल 25 हजार मजदूर बिजली के झटके लगने से और 15 हजार मजदूर आग लगने से मर जाते हैं।** इनसे कई गुणा मजदूरों के फैक्ट्रियों में हर साल हाथ-पैर कट जाते हैं, वे अपग हो जाते हैं। चेयरमैन महोदय के मुताबिक मैनेजमेन्टों की लापरवाही और खर्च कम करने की कोशिशें इस सब के प्रमुख कारणों में हैं। श्रीमान ने आगे कहा कि कारखानों के अधिकतर मैनेजर मजदूरों की सुरक्षा की जरूरतों को अनदेखा करने के दोषी तो हैं ही, वे फैक्ट्रियों के अन्दर स्वास्थ्य की बुनियादी जरूरतों को उपलब्ध नहीं करवाने के भी अपराधी हैं।

पूंजीवादी व्यवस्था में नौकरी की समस्या तो सुरसा के मुंह की तरह बढ़ती जा ही रही है, नौकरी मिलने पर फैक्ट्रियों में हर समय मौत मजदूरों के सिर पर अलग से मंडराती रहती है।

पूंजीवाद मजदूरों को मौत····· मौत ही दे सकता है। जिन्दगी के लिये·····खुशहाल जिन्दगी के लिये मजदूरों को क्रान्ति की राह पर बढ़ कर पूंजीवाद को दफनाना होगा।

—o—

दुनिया में मजदूरों के संघर्ष

जर्मनी

जर्मन एकता के ढोल की आड़ में मजदूरों पर क्या बीत रही है तथा वहां पर मजदूर इन हालात में क्या कर रहे हैं इसके लिये आइए 'सबबर्शन' पत्रिका में छपी सामग्री पर एक निगाह डालें।

जर्मन एकता, यानि पूंजी के जर्मन धड़े की एकता के लिए कदम उठाते समय पश्चिम जर्मनी के आर्थिक मामलों के मन्त्री ने हाल ही में कहा है कि पूंजी लगाने के लिए पूर्वी जर्मनी में आने वाले तीन से पांच साल तक वेतन कम रखना और काम के घन्टे बढ़ाना जरूरी है। फिर भी आने वाले छह महीनों में पूर्वी जर्मनी के एक तिहाई कारखानों के दिवालिया हो कर बन्द होने का हिसाब लगाया जा रहा है। इससे पूर्वी जर्मनी में बेरोजगारों की संख्या 2 लाख 24 हजार से बढ़कर पन्द्रह या बीस लाख हो जायेगी।

जाहिर है कि ऐसी बारूद जर्मन एकता के ढकोसले की धज्जियां उड़ाने की क्षमता रखती है। इसलिये एक तरफ जहां पूंजी के जर्मन नुमाइन्दे "जर्मन अनुशासन" और जर्मनी में चाणचक्क हड़तालों की परम्परा न होने की दलीलों से खुद को भरोसा दिला रहे हैं वहीं पूर्व और पश्चिम जर्मनी के मजदूर लीडर बिल्लेधारी बिचौलिए मजदूरों के असन्तोष को दलदल में धकेलने के लिए हाथ-पैर मार रहे हैं।

फिर भी, पूर्वी व पश्चिमी जर्मनी में मुद्रा एकीकरण लागू करने वाले दिन, 2 जुलाई को ही पूर्वी बर्लिन में 26 फैक्ट्रियों के 28 हजार मजदूरों ने तीन घन्टे की हड़ताल की और जलूस निकाले। अगले पन्द्रह दिन तक जलूसों और चाणचक्क हड़तालों का सिलसिला चला। मैटल तथा इलैक्ट्रिकल कारखानों के मजदूरों के साथ एक लाख बीस हजार मजदूर संघर्ष में शामिल हुए। पश्चिम जर्मनी के बिचौलियों की लीपापोती और सरकार द्वारा रियायतें देने के बाद यह मजदूर लहर ठन्डी पड़ी।

हड़तालों का एक सिलसिला खत्म हुआ है पर आर्थि[illegible] बिगड़ने के साथ ऐसे संघर्षों के बढ़ने की सम्भावना साफ नजर आती है। इसलिए जर्मनी में पूंजी के नुमाइन्दे "पुलिस को अधिक प्रभावी दंगा-विरोधी साज-सामान से लैस" कर रहे हैं। ऐसे में दुनिया के अन्य स्थानों के मजदूरों की ही तरह जर्मनी में मजदूरों के लिये जरूरी है कि वे क्रान्तिकारी मजदूर आन्दोलन के विकास के लिए कदम उठायें। मार्क्स-एंगेल्स-रोजा लुक्जेम्बर्ग-लीबनेख्त-मजदूर कम्युनिस्ट धारा से परिचित जर्मनी के मजदूर यह काम करने के लिए अच्छी स्थिति में हैं।

जर्मनी में मजदूर जिस प्रकार "जर्मन एकता" की पूंजीवादी अफीम को ठोकर मार कर अपने हितों में संघर्ष की राह पर आगे बढ़ रहे हैं उसी प्रकार **मजदूरों को यहां "हिन्दू एकता", "मुसलमान एकता" "सिख एकता", "भारतीय एकता" आदि-आदि की पूंजीवादी धोखा-धड़ियों को ठोकर मारनी चाहिए। मजदूरों द्वारा अपने हितों में संघर्ष तेज करने के लिये मजदूर एकता की बुनियाद मजबूत करनी जरूरी है।**

मजदूर जाट या चमार नहीं होते, मजदूर ब्राह्मण या शुद्र नहीं होते, मजदूर हिन्दू या मुसलमान नहीं होते, मजदूर बंगाली या बिहारी नहीं होते मजदूर भारतीय या जर्मन नहीं होते — आज जिन्दा रहने के लिए दुनिया के हर हिस्से में अपनी मेहनत करने की शक्ति बेचने को मजबूर लोग मजदूर हैं।

आज दुनिया भर में छाये पूंजीवादी शोषण के मजदूर प्रमुख शिकार हैं। मजदूरों की मुक्ति पूंजीवाद को दफनाने में है इसलिए विश्व पूंजीवाद के खिलाफ, दुनिया के मजदूरो एक हो!

—o—

संपर्क—मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी, बाटा चौक के पास, एन. आई. टी. फरीदाबाद 121001

मार्क्सवाद
(चौथी किस्त)

गलतफहमी न रहे इसलिये इस अंक में हम पहले यह स्पष्ट करने की कोशिश करेंगे कि मार्क्सवाद का नियतिवाद, यानि होना ही है, से कोई सम्बन्ध नहीं है। अब तक के सामाजिक संगठनों की जीवन क्रिया को सामाजिक जीवन का भौतिक उत्पादन अन्तिम विश्लेषण में निर्धारित करता रहा है—इसका मतलब यह नहीं है कि अब तक जो कुछ हुआ है वह होना ही था। कम-से-कम मार्क्सवाद इस किस्म की बात नहीं करता। चलते-चलते जिक्र कर दे कि जो लोग यह माने बैठे हैं कि समाजवाद तो आयेगा ही, वे लोग किसी "मार्क्सवादी" पन्थ अथवा मठ के सदस्य हो सकते हैं, मार्क्सवाद से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है।

विषय को स्पष्ट करने के लिये हमें सम्भव होने, आवश्यक होने और वास्तव में होने के बारे में कुछ माथा-पच्ची करनी होगी। आइये एक उदाहरण ले कर कुछ आसान राह पकड़ें।

आज से कई हजार साल पहले मानव पीढ़ी-दर-पीढ़ी अपने श्रम की उत्पादकता बढ़ाते हुए उस स्तर पर पहुँच गये थे कि वे अपनी लागत से अधिक का उत्पादन कर सकते थे। कहने का मतलब यह है कि एक व्यक्ति की उस समय जो आवश्यकतायें थी उनसे अधिक प्रोडक्शन करने की कैपेसिटी मानव ने प्राप्त की। इससे पैदा हुई दो मुख्य सम्भावनाओं पर गौर करें। अपनी लागत से अधिक उनकी उत्पादन क्षमता के बढ़ने के साथ मनुष्यों के रहन-सहन का स्तर सुधरना एक सम्भावना थी। लागत से अधिक उत्पादन के साथ एक दूसरी सम्भावना यह बनी कि अगर एक व्यक्ति कुछ लोगों पर नियन्त्रण स्थापित कर ले तो स्वयं मेहनत करने के बगैर भी उसका गुजारा हो सकता था। यह स्थिति आज से कई हजार साल पहले बनी। हम देखते हैं कि पहले-पहल हजारों वर्ष तक पहली सम्भावना ही वास्तव में घटित हुई। उनके श्रम की उत्पादकता बढ़ने के फलस्वरूप मानवों के जीवन-स्तर में सुधार हुआ। मानव की औसत आयु बढ़ी, मानव आबादी बढ़ी। यह दुनिया-भर में कई हजार वर्ष तक हुआ और उत्तरी व दक्षिणी अमरीकी महाद्वीपों में तो यह सिलसिला आज से पांच सौ साल पहले तक था। दूसरी सम्भावना के सर्वप्रथम वास्तविकता बनने वाले स्थान यूरोप-अफरीका-एशिया में भी हम हजारों वर्ष तक पहली सम्भावना मानव समुदायों के समस्त सदस्यों के जीवन-स्तर में सुधार—को ही वास्तव में होते देखते हैं। आज से पांच सात हजार साल पहले ही हम दूसरी सम्भावना, मानवों द्वारा मानवों के शोषण पर पलना, को मूर्त रूप ग्रहण करते देखते हैं। और यह भी इन महाद्वीपों में बसने वाली [illegible]क छोटे हिस्से में।

[illegible] श्रम उत्पादकता में लाई उल्लेखनीय वृद्धि से मानव [illegible]-भेद उपजने ही थे जैसी मान्यतायें, तथ्यों की अनदेखी करती हैं। एशिया अफरीका में आज से दो सौ साल पहले तक पशु पालन से जुड़े काफी लोग आदिम साम्यवादी सामाजिक गठनों में जीवन बसर कर रहे थे कहने का तात्पर्य यह है कि सम्भव होने का मतलब होना नहीं है।

इसी उदाहरण से आइये आवश्यकता के मसले को लें। मानव समुदाय के सब सदस्यों के जीवन-स्तर को सुधारते जाने से श्रम की उत्पादकता के बढ़ने की रफ्तार प्रभावित होती थी। उस समय श्रम की उत्पादकता में तेज बढ़ोतरी के लिये मानव समुदाय का वर्गों में बटना एक आवश्यकता थी लेकिन किसी आवश्यकता का होने का मतलब उसका वास्तविकता बन जाना नहीं होता। हजारों वर्ष तक समाज के वर्गों में बटने की वह आवश्यकता मात्र आवश्यकता रही। और आज से कुछ सौ साल पहले तक विशाल क्षेत्रों में इसने मूर्त-रूप ग्रहण नहीं किया, यह वास्तविकता नहीं बनी। हजारों वर्ष तक मानवों के आदिम साम्यवादी संगठनों के टूट कर प्रथम वर्ग-समाज में प्रवेश सम्भव व आवश्यक होने के बाबजूद यह वास्तविक नहीं बने। आज से पाँच-सात हजार साल पहले ही नदियों के किनारे कुछ क्षेत्रों में इस सम्भावना व आवश्यकता ने वास्तविकता का रूप ग्रहण किया। और इससे पहले तथा बाद में भी कई आदिम साम्यवादी संगठन इस सम्भावना व आवश्यकता को वास्तविकता में बदले बिना ही पृथ्वी से मिट गये।

हाँ, इस सम्भावना व आवश्यकता के वास्तविक बन जाने ने वर्तमान तक के मानव समाज को निर्णायक तौर पर प्रभावित किया है। इसलिये आमतौर पर मानव समाज के इतिहास में से इस एक धागे को ले लिया जाता है क्योंकि यह हमारे वर्तमान के सन्दर्भ में सर्वोपरि महत्व का है। लेकिन हमें इसे एक धागे के तौर पर ही लेना चाहिए और इसकी पृष्ठभूमि को ध्यान में रखना चाहिए।

इस चर्चा को हम अगले अंक में भी जारी रखेंगे।

[जारी] — ओ

हकीकत की एक झलक

अमरीका में जनवरी 89 के बाद से 5 लाख फैक्ट्री मजदूरों की छंटनी हो चुकी है। सितम्बर 90 में आर्डर पौने दो परसैंट कम होने की वजह से 66 हजार फैक्ट्री वर्कर काम से निकाले गये (आंकड़े अमरीकी सरकार के है)। पंडित लोग विश्लेषण में लगे हैं — आने वाली मन्दी का एक और सबूत····· पक्का सबूत नहीं····· । आने वाले दिनों में अमरीका में मजदूरों का असन्तोष बढ़ेगा, वहाँ क्रान्तिकारी मजदूर आन्दोलन के विकास की सम्भावना बढ़ेगी।

रूस में लागू की जा रही नई आर्थिक नीतियों से बड़ी संख्या में कारखाने बन्द होंगे और तीन करोड़ पचास लाख मजदूर बेरोजगार होंगे। रूस सरकार कहती है कि वह नई नौकरियों का जुगाड़ कर रही है। सरकार उम्मीद कर रही है कि बीस-तीस लाख रूसी नौकरी की तलाश में देश छोड़ जायेंगे। रूस में काम कर रहे वियतनामी, चीनी और उत्तर कोरियायी मजदूरों को रूस से निकालने की कार्यवाही भी सरकार ने शुरू कर दी है। पर इन सब के हो जाने के बाबजूद, रूस सरकार कहती है कि शीघ्र ही बेरोजगार हो रहे तीन करोड़ पचास लाख मजदूरों में से दो करोड़ मजदूरों को काम नहीं मिलेगा, दो करोड़ मजदूर बेरोजगार ही रहेंगे। गोर्बाचोव को नोबेल पुरस्कार देने के बाबजूद विश्व पूंजी के नुमाइन्दे चिन्तित हैं। उन्हें आशंका है कि बेरोजगारों की बढ़ती फौज की वजह से रूस में आने वाले दो वर्ष बहुत ही तनावपूर्ण होंगे इसलिए आई एल ओ और फ्रान्स व जर्मनी की सरकारों ने मजदूरों को काबू में रखने के लिए रूस सरकार को मदद की पेशकश की है। पर रूस में पूंजीवादी एकतन्त्र का गर्व चूर कर चुके मजदूर क्या पूंजीवादी जनतन्त्र की नकाब नोचने में अधिक समय लगायेंगे? आने वाले दिनों में रूस में पूंजीवाद के विभिन्न रूपों के खिलाफ संघर्ष बढ़ेंगे, क्रान्तिकारी मजदूर आन्दोलन के विकास की सम्भावना बढ़ेगी।

दक्षिण अमरीका में पूंजी के नुमाइन्दे दंगों के भय से त्रस्त हैं। आइये वहा के कुछ देशों की घटनाओं पर एक नजर दौड़ायें।

वेनेजुएला फरबरी 89 में सरकार द्वारा बस भाड़े बढ़ाने के खिलाफ राजधानी काराकास में लाखों लोग सड़कों पर निकल आए और उन्होंने मोर्चाबन्दी कर ली। तीन दिन तक पचास लाख आबादी वाला यह शहर सरकार के कन्ट्रोल के बाहर था। एक हजार लोगों को मार कर फौज ने वहाँ सरकार का नियन्त्रण स्थापित किया। इस खून खराबे के बाबजूद इस साल जुलाई में सरकार द्वारा तेल और गैस के भाव बढ़ाने के खिलाफ लोग सड़कों पर निकल आए।

पेरू इस साल अगस्त में नये चुने गय राष्ट्रपति ने खान-पान की वस्तुओं के भाव चार गुणा बढ़ा दिए। यूनिसेफ का एक अधिकारी कहता है कि इसने पेरू की एक पूरी पीढ़ी के बच्चों के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य पर बहुत बुरा असर डाला है। वैसे, भाव बढ़ाने के खिलाफ भड़के दंगे में तीन लोग मारे गए।

अरजेन्टीना—पिछले साल एक बड़े शहर रोजारियो में रोटी के लिए भड़के दंगे में 16 लोग मारे गये थे। वहाँ के उपराष्ट्रपति को भय है कि मजदूरों-मेहनतकशों को और निचोड़ने के लिए सरकार के प्रस्तावित कदमों से सामाजिक उथल-पुथल बढ़ेगी!

ब्राजील—आस-पास की घटनाओं से सीख कर ब्राजील के राष्ट्रपति ने धूर्ततापूर्ण कदम उठाये। न्यूनतम वेतन आदि बढ़ा कर अल्प-कालिक समर्थन जुटाया और फिर इस साल मार्च में मजदूर वर्ग पर हमला किया मार्च से अब तक दस लाख मजदूरों को नौकरी से निकाला जा चुका है। जुलाई में आटो वर्करों ने दंगा किया।

डोमिनिकन रिपब्लिक—अगस्त में सरकार द्वारा खान-पान की वस्तुओं के भाव दुगुने करने पर पुलिस से भिड़न्त में 11 लोग मारे गए।

और 15 अक्टूबर के अपने सम्पादकीय में यहाँ का एक प्रमुख अंग्रेजी अखबार अधिकाधिक बर्बर हो रहे भारतीय समाज के आने वाले दिनों में और भी अधिक बर्बर होने की बात करता है·· ···

पूंजीवादी व्यवस्था का गहराता संकट दुनिया-भर में असन्तोष को बढ़ा रहा है। इसकी वजह से बर्बरता तो बढ़ ही रही है, क्रान्तिकारी मजदूर आन्दोलन के विकास की सम्भावना भी बढ़ रही है। बर्बरता या क्रान्ति? चुनना हमारे हाथ में है।

—x—

स्वत्वाधिकारी व सम्पादक शेरसिंह द्वारा आटोपिन झुग्गी, फरीदाबाद से प्रकाशित व अलकनन्दा प्रिंटिंग प्रेस C-III/206, सं. गां. मेमो. न. से मुद्रित